THE TIMES OF INDIA

Date: 11-10-25

Cheer up, don

Five tips for Trump before next year's Nobels

TOI Editorials

First thing, Trump, it's alright not to get the Nobel Peace Prize. Nobody, barring a grand total of 143 men and women, has got it over the past 125 years. That's seriously rare, but rarer still is being US prez, which you've been twice. So, cheer up. Second, as Orwell said, war is peace. The converse must be true then – peace is war. Indeed, there were 338 nominees for this year's peace Nobel. We hope you were in the fray, but we won't know for 50 more years, because that's the rule. Suppose you weren't even in the running… the 7, or 70, or 700 wars you stopped this year was sheer selfless service then. Feel good about it.

Third – Orwell again – war is indeed peace. That's why Venezuelan Maria Corina Machado got the peace Nobel, and you didn't. Just look up the past winners and you'll find most weren't present at or behind an armistice. Like God, peace works in mysterious ways. Sometimes, it involves defusing nukes, at others it means standing up for rights of women and children. Often, like Machado, it requires fighting for rights and democracy within a country.

Fourth, if it ain't broke…don't break it. US has been a model of democracy, free speech and rule of law. Don't turn it into a tinpot dictatorship – like Maduro in Venezuela – with your executive orders and national guard deployment. You won't win any awards for starting acivil war, but your successor might win a Nobel for stopping it.

Fifth, keep up the good work. You've leashed Netanyahu and paused the killing in Gaza. Now, make sure the peace holds. If it holds a year from now, you will have a very good chance at winning. You might fly away with $1.1mn on that $400mn Qatari plane. Just make sure to make it tax-free with an executive order first.

THE HINDU

Date: 11-10-25

Crime patterns

The 2023 NCRB report shows a sharp rise in cybercrime and crimes against tribals

Editorial

The National Crime Records Bureau's annual reports on crime and prison statistics have to be read with a strong caveat — most of the numbers cannot be compared between States because they are largely dependent upon the registration/reporting of crimes in the first place. However, certain national trends and sharp year-on-year changes within States can still reveal meaningful patterns that could demand policy intervention. The recent NCRB report for 2023 — delayed by a year — points to a worrying trend of postponed surveys, reports and even the Census under the current Union Government. But there are also three telling numbers: the 2.8% decrease in murder cases across the country; a staggering 28.8% surge in crimes against Scheduled Tribes (ST), and a 31.2% increase in cyber crimes. While the decrease in murder cases will come as a relief to law enforcement — most of the cases pertain to disputes, personal vendetta or enmity and "gain" — the other two numbers are alarming. The steep rise in crimes against STs is largely due to the ethnic violence in Manipur, with the registered numbers jumping from just one in 2022 to 3,399 in 2023 — which a more effective government could have mitigated. Madhya Pradesh and Rajasthan also recorded significantly high crime rates against tribals suggesting their vulnerability in the central Indian States. This is not a new phenomenon; previous NCRB reports have highlighted higher crime rates in regions with significant tribal populations.

With greater Internet penetration across the country, there has been an increase in cybercrime, particularly related to financial fraud and sexual exploitation. Anecdotally, it is evident that these numbers must have gone up even further in the last two years with the greater use of digital financial instruments in daily transactions and investment. While policing has tried to keep up with the growing menace of cybercrime, with specialised cells, the ubiquitousness and deepening spread of digital crimes require more sophistication and dedication by the police to tackle them. Crimes against children rose by 9.2% in 2023 — with the offender known to the victim in 96% of the cases. While the increase could be a function of improved reporting across States, the high number (1,77,335 cases) suggests that States must work on a war footing to sensitise children about these crimes and inappropriate behaviour by adults. A subset of these crimes could also include the application of the POCSO Act in the case of consensual adolescent relationships and this is an area that needs to be carefully handled by the prosecuting and policing agencies. Reported crimes against women registered a modest increase of 0.4%, but this masks a 14.9% spike in dowry-related crimes, pointing to a persistent societal problem.

दैनिक भास्कर

Date: 11-10-25

गाजा में शांति से दुनिया चैन की सांस ले रही है

संपादकीय

हमास ने क्या किया, उस पर इजराइल की प्रतिक्रिया कैसी और किस 'ने मात्रा में न्यायपूर्ण होती, ये सवाल गौण हैं। आज युद्ध की विभीषिका से बचे फिलिस्तीनियों के चेहरे पर खुशी है, इजराइल के लोग भी उल्लास में हैं और दुनिया राहत की सांस ले रही है। इतना काफी है। यह ट्रम्प के दबाव के बगैर संभव न होता । इजराइल को दबाना ट्रम्प के अलावा किसी और के बस की बात नहीं थी। 20 बिंदुओं के समझौता - मसौदे में 19वां बिंदु फिलिस्तीनियों को आने वाले समय में स्व-शासन देने का वादा है, जिसे तेल अवीव ने मजबूरी में ही माना होगा। हमास भी आसानी से हथियार छोड़ कर शांति की प्रक्रिया का हिस्सा बनेगा, यह कुछ हफ्तों पहले तक सोचना भी नामुमकिन था । पीएम मोदी ने ट्रम्प और इजराइली पीएम को धन्यवाद देते हुए इसे अनायास ही ऐतिहासिक नहीं बताया। इसमें कोई दो राय नहीं कि ट्रम्प ने इजराइल - ईरान जंग में भी दबंग मध्यस्थ की भूमिका न निभाई होती तो स्थिति अकल्पनीय होती । ट्रम्प के कुछ प्रयासों को नए नजरिए से देखने की जरूरत है। रूस-यूक्रेन युद्ध एक-दूसरे को अस्तित्वविहीन करने की जिद तक पहुंच गया है। अमेरिका दोनों को धमकी से लेकर पुचकारने तक सब कुछ कर रहा है। रूस को भी सोचना होगा कि इस जंग ने उसकी आर्थिक स्थिति को बर्बाद किया है। बहरहाल, अगर अमेरिका व्यापार में नर्मी बरतता है तो मोदी-ट्रम्प भेंट सम्भव है।

Date: 11-10-25

चुनाव से पहले मुफ्त सौगातें क्या नैतिक रूप से सही हैं?

पवन के. वर्मा, (पूर्व राज्यसभा सांसद व राजनयिक)

बिहार विधानसभा चुनाव का ऐलान 6 अक्टूबर को तीन चुनाव आयुक्तों ने एक प्रेस कॉन्फ्रेंस में किया। यह घोषणा पहले ही कर दी गई थी कि प्रेस कॉन्फ्रेंस 4 बजे होगी। इसके एक घंटे पहले दोपहर 3 बजे बिहार में सत्तारूढ़ एनडीए ने मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना के तहत 21 लाख महिलाओं के खाते में 2100 करोड़ रुपए हस्तांतरित किए। हर महिला को 10 हजार रुपए दिए गए। इससे पहले, उसी दिन मुख्यमंत्री ने पटना मेट्रो के एक हिस्से का उद्घाटन भी किया।

आदर्श आचार संहिता लागू होने से ठीक पहले खुले हाथों से इतना पैसा बांटना क्या नैतिक तौर पर सही है? भले यह गैर-कानूनी ना हो, लेकिन कानून की भावना के विरुद्ध अवश्य है। मुझसे पूछें तो यह खुलेआम रिश्वत बांटने जैसा है। अतीत में खुद प्रधानमंत्री जनकल्याण के नाम पर रेवड़ियां बांटने की प्रवृत्ति की निंदा कर चुके हैं। लेकिन यहां उनकी खुद की 'डबल इंजन' सरकार ऐसा कर रही है। चुनाव स्वतंत्र होने ही नहीं, बल्कि दिखने भी चाहिए। आजादी के बाद के शुरुआती दशकों में वोटिंग के दौरान हिंसा, बूथ कैप्चरिंग, बैलट से छेड़छाड़ और सरकारी मशीनरी का दुरुपयोग आम बात थी। 1990 से 1996 तक मुख्य चुनाव आयुक्त रहे टी. एन. शेषन के कार्यकाल में महत्वपूर्ण बदलाव आया। शेषन ने सरकारी मशीनरी के दुरुपयोग और शराब बांटने पर रोक लगाई। वोटर आईडी कार्ड लागू करने, चुनाव खर्च सीमित करने और संवेदनशील बूथों पर केंद्रीय बलों की तैनाती पर जोर दिया। इससे बूथ कैप्चरिंग और वोटिंग के दिन होने वाली हत्याओं में कमी आई। पर्यवेक्षकों की तैनाती बेहतर हुई और चुनाव अधिक विश्वसनीय होने लगे।

शेषन ने आदर्श आचार संहिता के सख्ती से पालन पर जोर दिया था। ये केंद्रीय निर्वाचन आयोग द्वारा बनाए गए नियम-कायदे हैं। ये कानून तो नहीं हैं, लेकिन जन-आकांक्षाओं, कानूनी समर्थन और नैतिकता की धारणा से ये पोषित होते हैं। आचार संहिता चुनाव कार्यक्रम की घोषणा से लेकर परिणाम घोषित होने तक प्रभावी रहती है। यह सरकारी मशीनरी के दुरुपयोग, मतदाताओं को प्रभावित कर सकने वाली किन्हीं भी नई परियोजनाओं-योजनाओं और सत्ताधारी दल व मंत्रियों द्वारा धन-वितरण को प्रतिबंधित करती है। मतदाताओं को प्रभावित करने या प्रचार की शुरुआत से पहले 'फील गुड' का माहौल बनाने जैसे कदमों से यदि किसी का इरादा साफ तौर पर चुनावी फायदा लेने का दिख रहा है तो नैतिकता भी संदेह के दायरे में आ जाती है। आचार संहिता की तारीख के आसपास ऐसा हो तो बहुत संभावना है कि इन मुफ्त की सौगातों को नीति के बजाय प्रलोभन माना जाए।

राजनीतिक निष्पक्षता के लिए समान अवसर जरूरी हैं। लेकिन चुनावों में स्वाभाविक तौर पर सत्तारूढ़ पार्टी फायदे में होती है। उसके हाथ में सरकारी तंत्र, विजिबिलिटी और संसाधन होते हैं। फ्रीबीज़ यदि आचार संहिता लागू होने से ठीक पहले दी जाएं तो यह फायदा और बढ़ जाता है। वहीं इसका जवाब देने के लिए विपक्षी दलों को समान अवसर नहीं मिल पाता। मतदाता तर्कसंगत चयन के बजाय उम्मीदवार की इस संरक्षणवादी राजनीति में फंस जाते हैं। जनता के पैसों का इस्तेमाल सियासी लाभ के लिए नहीं, बल्कि लोगों की भलाई के लिए होना चाहिए। कोई योजना वोट खरीदने की मंशा से- खासतौर पर अंतिम समय में घोषित की जाए तो इससे यह सिद्धांत कमजोर होता है कि शासन सभी के लिए होना चाहिए- महज उन लोगों के लिए नहीं, जो सत्ताधारी दल को वोट देते हैं या दे सकते हैं। इसके अलावा, अब यह धारणा भी बन गई है कि ऐसी मुफ्त की सौगातें सुशासन के लिए आवश्यक हैं। यह शासन में गंभीर कमजोरी का संकेत है, वरना सरकारों को अंत समय में ऐसे प्रलोभनों का सहारा क्यों लेना पड़े? ऐसी परंपराएं जब आम हो जाती हैं, तो वे चुनावी भ्रष्टाचार को निचले स्तर तक ले आती हैं। कभी अनुचित समझी जाने वाली चीज आज सामान्य मान ली जाए तो इससे लोकतांत्रिक संस्कृति को नुकसान होता है।

निष्कर्ष यही है कि चुनाव आचार संहिता लागू होने से ठीक पहले मुफ्त की सौगातें बांटना नैतिक रूप से निंदनीय है। इससे ऐसा लगता है, जैसे कल्याण की धारणा को सरकार के दायित्व के स्थान पर चुनावी हथकंडे के तौर पर इस्तेमाल किया जा रहा है। असल लोकतंत्र कानून में नहीं, बल्कि उन मानदंडों में होता है, जिन्हें हम वैधानिक और निष्पक्ष मानते हैं। सौभाग्य से, वोटर अब इस सियासी चालबाजी पर ज्यादा ध्यान नहीं देते। अकसर वो पैसा तो ले लेते हैं, लेकिन वोट उसी को देते हैं, जो उन्हें बेहतर लगता है!

दैनिक जागरण

Date: 11-10-25

बड़ा खतरा है घुसपैठ

संपादकीय

दैनिक जागरण की ओर से आयोजित नरेन्द्र मोहन स्मृति व्याख्यान एवं साहित्य सृजन सम्मान के अवसर पर केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह ने घुसपैठ के कारणों पर प्रकाश डालते हुए जो विचार व्यक्त किए, उनसे यही पता चलता है कि पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि से होने वाली घुसपैठ क्यों एक गंभीर समस्या बनी हुई है ? उन्होंने यह तो स्वीकार किया कि सीमाओं की सुरक्षा केंद्र सरकार की जिम्मेदारी है और इस नाते घुसपैठ रोकना उनका दायित्व है, लेकिन इसी के साथ यह प्रश्न भी किया कि आखिर घुसपैठिये जाते कहां हैं और उन्हें शरण कौन देता है? उन्होंने स्पष्ट किया कि सीमा पर दुर्गम स्थलों के कारण घुसपैठ होती रहती है, लेकिन घुसपैठिये सीमावर्ती क्षेत्रों में ही इसलिए अपना ठिकाना बना लेते हैं, क्योंकि उन्हें वहां शरण मिलती है। इतना ही नहीं, उनके लिए फर्जी पहचान पत्र बनाने का काम किया जाता है। यह एक ऐसी सच्चाई है, जिससे कोई भी इन्कार नहीं कर सकता। आखिर यह किसी से छिपा नहीं कि पश्चिम बंगाल में किस तरह बड़ी संख्या में घुसपैठिये राशन कार्ड, मतदाता पहचान पत्र एवं आधार बनवा लेते हैं। यह संभव नहीं कि राज्यों का शासन इससे अनभिज्ञ हो ।

यह चिंताजनक है कि कुछ राज्य सरकारें घुसपैठियों को वोट बैंक के रूप में देखती हैं। यही कारण है कि बंगाल के सीमावर्ती इलाकों में किसी थाने में घुसपैठियों के खिलाफ कोई शिकायत दर्ज नहीं होती । घुसपैठियों को वोट बैंक के रूप में देखना और उन्हें शरण देना देश की सुरक्षा के साथ जानबूझकर किया जाने वाला खिलवाड़ है। घुसपैठिये शरणार्थी नहीं हैं। दोनों में अंतर किया जाना चाहिए | अब यह स्पष्ट है कि कुछ राज्य सरकारें घुसपैठ रोकने को लेकर गंभीर नहीं और उलटे जब कभी घुसपैठियों को निकालने के प्रयत्न होते हैं, तो वे उसके खिलाफ खड़ी हो जाती हैं। इस सच से मुंह नहीं मोड़ा जाना चाहिए कि बंगाल और झारखंड के साथ- साथ पूर्वोत्तर के कई राज्यों में वोट बैंक की संकीर्ण राजनीति के कारण ही घुसपैठियों की संख्या बढ़ गई है। कई सीमावर्ती इलाकों में उन्होंने न केवल सामाजिक तानेबाने को बदल दिया है, बल्कि कुछ निर्वाचन क्षेत्रों में चुनाव परिणाम प्रभावित करने की स्थिति में आ गए हैं। यह स्थिति लोकतंत्र के लिए खतरे की घंटी है। इस घंटी को सभी राजनीतिक दलों को दलगत हित से ऊपर उठकर सुनना चाहिए। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि जब घुसपैठ को रोकने के मामले में राजनीतिक आम सहमति दिखनी चाहिए, तब उसके साथ-साथ मतदाता सूचियों के पुनरीक्षण की चुनाव आयोग की प्रक्रिया का भी विरोध किया जाता है। ऐसे में, यह और जरूरी है कि देश भर में मतदाता सूचियों का विशेष गहन पुनरीक्षण प्राथमिकता के आधार पर किया जाए।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 11-10-25

शांति का नोबेल

संपादकीय

मारिया कोरिना मचाडो को शांति क्षेत्र में नोबेल की घोषणा सुखद और अनुकरणीय है। यह ऐसी राजनीति का सम्मान है, जो सदैव शांति और लोकतंत्र के पक्ष में समर्पित रहती है। जिस दौर में अधिकतर सत्ताधारी नेता तानाशाही करने लगे हैं, उस दौर में मारिया जैसे कुछ स्वाभाविक नेतृत्वकर्ता भी हैं, जो लोकतंत्र का झंडा बुलंद किए हुए हैं। यह वेनेजुएला में

संघर्षरत लोकतंत्र का सम्मान है, इससे दुनिया के तमाम लोकतांत्रिक देशों को भी बल मिलेगा। विशेष रूप से अमन-चैन के पक्ष में महिलाओं का मनोबल बढ़ेगा। वेनेजुएला की 58 वर्षीय विपक्षी नेता मारिया कोरिना ने शुक्रवार को जब नोबेल सम्मान की खबर सुनी, तो उनकी आंखों में आंसू आ गए और उन्होंने पूरा श्रेय स्वयं न लेते हुए कहा कि यह नोबेल शांति पुरस्कार पूरे आंदोलन और समाज की जीत है। विनम्र नेता ने यह भी कहा है कि वह इस पुरस्कार की हकदार नहीं है, क्योंकि यह सिर्फ एक व्यक्ति हैं। दरअसल, यह एक स्वाभाविक नेता की पहचान है कि वह अपने सम्मान का श्रेय समाज को देता है।

दूसरी ओर, नोबेल के लिए जिस तरह से अमेरिकी राष्ट्रपति लालायित थे, उससे पता चलता है कि यह कैसे नेताओं का दौर है। अमेरिका के राष्ट्रपति खुलकर मांग रहे थे कि उन्हें शांति का नोबेल मिलना चाहिए, क्योंकि उन्होंने बीते महीनों में कथित रूप से करीब सात युद्धों को समाप्त कराया है। यह भी दर्ज करने लायक पहलू है कि ट्रंप के समर्थकों ने नोबेल न मिलने पर नाराजगी का भी इजहार किया है। व्हाइट हाउस ने अपनी आधिकारिक प्रतिक्रिया में यहां तक कहा है कि नोबेल समिति ने शांति पर राजनीति को प्राथमिकता दी है। नोबेल की घोषणा से ठीक पहले इजरायल और हमास के बीच युद्धविराम और एक संभावित शांति समझौते के साथ इन अटकलों को बल मिला था कि ट्रंप को नोबेल मिल सकता है। रूस, इजरायल, पाकिस्तान, अजरबैजान, आर्मेनिया, थाईलैंड और कंबोडिया सहित कई देशों ने ट्रंप का पक्ष लिया था। खुद ट्रंप भी हर संभव जगह संपर्क साधते हुए नोबेल पाना चाहते थे, पर नोबेल समिति के निर्णय ने तमाम प्रयासों पर पानी फेर दिया। ध्यान रहे, इस वर्ष 338 नामांकन प्राप्त हुए थे, जिनमें 244 व्यक्ति और 94 संगठन शामिल थे। यह बहुत अच्छी बात है कि दुनिया में इतने लोग और संगठन शांति प्रवास में लगे हैं, उनके प्रयासों में कमी नहीं आनी चाहिए। ट्रंप के प्रयासों में भी तेजी आनी चाहिए और जरूरी ईमानदारी भी विशेषकर उन्हें यह सोचना चाहिए कि पाकिस्तान जैसे आतंकी पोषक देश की निगाह में शांति दूत होना वास्तव में खुद को धोखा देने के समान है।

बहरहाल, मारिया कोरिना को मिला सम्मान मात्र सांकेतिक नहीं रहना चाहिए। अपने देश में लोकतंत्र को मजबूत करने की उनकी यात्रा यहीं थमनी नहीं चाहिए। हमने अतीत में देखा है, अनेक सम्मानित हस्तियां उम्मीदों पर खरी नहीं उतरी हैं। अपने पड़ोस में ही अगर देखें, तो नोबेल सम्मानित आंग शान शू की म्यांमार में रोहिंग्याओं के संहार के समर्थन में नजर आई थीं। नोबेल सम्मानित मोहम्मद यूनुस बांग्लादेश में अल्पसंख्यकों के पक्ष में खड़े नहीं हो पाए। मलाला यूसुफजई अपने ही देश पाकिस्तान में आजादी से रह नहीं सकती और विदेश में रहने को मजबूर हैं। नोबेल का सम्मान तो तब है, जो नोबेल पाने वाला हकीकत में अपनी जमीन पर अपनी सार्थकता सिद्ध करे। मारिया कोरिना से ऐसी ही उम्मीद करनी चाहिए कि तानाशाही के खिलाफ उनके स्वप्न साकार हों और उनकी सफलता का प्रकाश तमाम देशों तक पहुंचे।